DEV SANSKRITI: Interdisciplinary International Journal **(2015), 6, 44-48**

# बौद्ध दर्शन में वर्णित साधना पद्धति

निवेदिता

सारांश

साधना आत्मिक प्रगति का आधार है। साधना की तीन प्रणालियाँ मानी गई है– कर्म, ज्ञान और भक्ति। बुद्ध के अनुसार शरीर को दण्ड देने की अपेक्षा ज्ञान प्राप्ति से और ध्यान साधना के अभ्यास से निर्वाण प्राप्त हो सकता है। बौद्ध साधनाएँ 'शील, प्रज्ञा और समाधि के रूप में 'त्रिरत्न' के नाम से भी जानी जाती हैं। बौद्ध साधनाभ्यास का आधार 'शील' है। क्योंकि बौद्ध साधना में शील सम्पन्न साधक ही समाधि का अधिकारी होता है। बौद्ध साधना 'हीनयान' व 'महायान' के रूप में भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों को प्रदर्शित करती है। हीनयान केवल 'निवृत्तिमार्ग' है। उसकी सारी शिक्षा, समग्र साधना केवल एक आत्मा के निर्वाण को ही लक्ष्य बनाती है तथा महायान प्रवृत्तिमार्ग धर्म माना जाता है। महायान का मत है कि सभी मनुष्यों को उन्नति के योग्य बनाया जा सकता है। हीनयान 'ज्ञान' को प्रधानता देता है और महायान 'भक्ति' की विशेषताओं को स्वीकार करते हुए बुद्ध की मूर्ति–पूजा व अर्चना को स्थान देता है। महायान बौद्ध साधना में 'शास्ता' का ईश्वरीकरण कर दिया गया है। सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य में चित्तवृत्तियों के संयमन की कठिनाईयों का वर्णन प्राप्त होता है। चित्तवृत्तियों के सम्यक् नियंत्रणों के अभाव में 'अमृतपद निर्वाण' को प्राप्त करना असम्भव है। बौद्ध आष्टांगिक मार्ग के अभ्यास द्वारा चित्तवृत्तियों के ऊपर नियंत्रण प्राप्त हो सकता है। जीवन को बुद्ध ने दुःखमय माना है, परन्तु शील के आचरण द्वारा नैतिक जीवन अपनाते हुए अवांछित दुःखों को उत्पन्न होने से रोका जा सकता है। साधनाएँ ही दुःख निरोध में सहायक होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति सामान्य नैतिक नियमों का पालन करने लगे तो वह स्वयं के जीवन को तो सुखमय बनाएगा, साथ ही साथ समस्त विश्व सुखमय हो जाएगा क्योंकि मनुष्यमात्र में देवत्व विद्यमान है जिसे साधना द्वारा परिष्कृत किया जा सकता है।

*कूट शब्द* : बौद्ध दर्शन, साधना, शील, हीनयान एवं महायान।

वैदिक साधना पद्धति हो या अवैदिक सभी का भारतीय आध्यात्मिक व सांस्कृतिक परम्परा के अन्तर्गत विशद् रूप में चिन्तन किया गया है। आध्यात्मिक मार्ग में साधना को केवल कर्मकाण्ड न मानकर आन्तरिक पुरुषार्थ माना गया है। यह पुरुषार्थ मनुष्य के अस्थिर चित्त, व्याकुल हृदय व उद्विग्नमन को शान्ति प्रदान करने के साथ–साथ मोक्ष, कैवल्य, निर्वाण आदि उच्चतम् जीवन मूल्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित भी करता है।

साधना का अर्थ है– स्वयं पर नियंत्रण। साधना मार्ग में प्रवृत्त होने के लिए नीति, वैराग्य, ज्ञानादि विशिष्ठ गुणों की आवश्यकता होती है और इसका मुख्य साधन 'मन' है। साधना हेतु सर्वप्रथम मन की ध्यानावस्था परम आवश्यक है। यही इसका प्रधान अंग भी है। साधना की तीन प्रणालियाँ मानी गई है– कर्म, ज्ञान और भक्ति। इन तीनों प्रणालियों को 'त्रिवर्ग' की संज्ञा भी दी गई है। वेदों में बताया गया है कि मानव को प्रथमतः प्रवृत्तिमार्ग में रहकर, प्रवृत्त कर्मों के द्वारा त्रिवर्ग की साधना करनी चाहिए और इनके पश्चात् चतुर्थ वर्ग अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति संभव होती है। सार्थक साधना वही है जिसमें चारों पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं (कल्याण, 1940, पृ.141)। साधना जहाँ जीवनयापन की चिन्तन एवं कर्मप्रधान पद्धति है वहीं उपासना उच्चस्तरीय स्थिति का अभ्यास कहलाती है। साधना बहिरंग को सुव्यवस्थित करने के लिए उपयोगी मानी जाती है एवं उपासना अन्तरंग को परिष्कृत करने में सहयोगी सिद्ध होती है (आचार्य, 1998, पृ. 1.19)। बौद्ध साधना पद्धति साधना के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान रखती है। वैदिक साधना एवं जैन साधना की तरह बौद्ध साधना में कठोरता नहीं है। बुद्ध के अनुसार शरीर को दण्ड देने की अपेक्षा ज्ञान प्राप्ति से और ध्यान–साधना के अभ्यास से निर्वाण प्राप्त हो सकता है। यह मार्ग सर्व–साधारण व विशिष्ठ दोनों ही प्रकार के व्यक्तियों के लिए सुगम व श्रेयष्कर है।

बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य माने जाते हैं। महर्षि व्यास और आचार्य विज्ञानभिक्षु ने चार आर्यसत्यों की तुलना चिकित्सा शास्त्र के चतुर्व्यूह से की है; जैसे– चिकित्सा शास्त्र में 'रोग, रोगहेतु, रोगनिदान एवं रोगनिदानोपाय' का उल्लेख है, ठीक उसी प्रकार बौद्ध अध्यात्म शास्त्र में दुःख, दुःखसमुदय, दुःखनिरोध एवं दुःख निरोधमार्ग हैं (पाण्डेय, 2003, पृ.92)। प्रथम आर्यसत्य 'दुःख' में समस्त संसार को दुःखमय बताया गया है। बुद्ध के अनुसार, 'समस्त विश्व तीन प्रकार के दुःखों से पीड़ित है; प्रथम– दुःखदुःखता, द्वितीय– संस्कार दुःखता और तृतीय– विपरिणाम दुःखता। इस कारण दुःख की स्थिति में दुःखद परिणाम तो होते ही हैं परन्तु जो

सुखोत्पादक संस्कार हमें दिखाई देते हैं, वे उत्पत्ति व स्थिति में सुख प्रदान करने के पश्चात् भी परिणामतः दुःखद ही सिद्ध होते हैं। द्वितीय आर्य–सत्य 'दुःख समुदय' में दुःख के कारण का वर्णन है। 'कारण' विद्यमान होने पर 'कार्य' और 'कार्य' रहने पर 'कारण' अवश्य होता है, इसलिए विश्व में जहाँ दुःख है वहाँ दुःख का कारण भी है। इसे 'द्वादशनिदानचक्र' भी कहा गया है। जिसमें भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यत्काल के जीवनचक्र का वर्णन है। बौद्ध दर्शन कर्म सिद्धान्त का अनुयायी है। उनके अनुसार, अतीत के कर्मों के कारण वर्तमान जीवन के कर्मों से भविष्य के जीवन का निर्माण होता है। इसे 'भवचक्र' भी कहा जाता है।

बौद्ध दर्शन सांख्य सत्कार्यवाद का आलोचक है, इसके स्थान पर वह 'प्रतीत्यसमुत्पाद' को स्वीकार करता है। प्रतीत्यसमुत्पाद के अनुसार सभी वस्तुएँ परस्पर समुत्पन्न हैं, *'अस्मिन् सति इदं भवति'* अर्थात् इसके होने पर यह होता है (मज्झिम निकाय, पृ.155)। तृतीय आर्यसत्य में 'दुःख निरोध' का वर्णन है। दुःख के कारण का नाश ही दुःख निरोध है। निर्वाण 'दुःख शून्यता' है। बुद्ध के अनुसार, निर्वाण अर्थात् राग, द्वेष और मोह को स्वचित्त से दूर करना एवं इनका पूर्णतः नाश करना है (शास्त्री, 2000, पृ.1435)। प्रतीत्यसमुत्पाद दुःखसमुदय को दर्शाता है और साथ ही साथ दुःख निरोध का मार्ग भी बताता है। इस 'भवचक्र' या 'धर्मचक्र' में अविद्या से जरामरण तक क्रमबद्धरूप में दुःख का वर्णन व कारण है। जिस क्रम में दुःख समुदय है इसी क्रम में दुःख निरोध भी सम्भव है। प्रत्येक दुःख के कारण का निरोध होने पर प्रत्येक दुःख का नाश भी हो जाता है। चतुर्थ आर्यसत्य में 'दुःख निरोधमार्ग' का उल्लेख है। इसके अन्तर्गत समस्त बौद्ध साधनाएँ समाहित हैं। साधनाएँ ही दुःख निरोध में सहायक होती हैं। बौद्ध साधना को 'मध्यमा प्रतिपद् मार्ग' भी कहा जाता है। इस मार्ग में अतिसुख एवं अतिदुःख दोनों का निषेध किया गया है। बौद्ध साधना अष्टांगमार्गी है, निर्वाण को अष्टांगिक मार्ग भी कहा जाता है (आम्बेडकर, 2000, पृ.231)। इस अष्टांग मार्ग का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है –

**सम्यक् दृष्टि**– सम्यक् दृष्टि का अभिप्राय 'यथार्थ ज्ञान' है। इसके अन्तर्गत चारों आर्यसत्यों का ज्ञान समाहित है। अर्थात् दुःख विद्यमान है, दुःख तृष्णा से उत्पन्न है, दुःख का नाश सम्भव है और निर्वाण की सिद्धि अष्टांग मार्ग पर चलने से प्राप्त होती है।

**सम्यक् संकल्प**– सम्यक् संकल्प का लक्ष्य है– त्याग, अद्वेष और अहिंसा को उद्देश्य बनाना।

**सम्यक् वाक्**– असत्य न बोलना, व्यर्थ बातें व असभ्य वचनों का उपयोग न करना। यह सभी सम्यक् वचन या सम्यक् वाक् माने जाते हैं।

**सम्यक् कर्मान्त**– सम्यक् कर्मान्त के अन्तर्गत पंचशील आते हैं। अहिंसा, बिना आज्ञा दूसरों का धन–वस्तु आदि न लेना, व्यभिचार से बचना, झूठ न बोलना व मादक पदार्थों का सेवन न करना पंचशील माने गए हैं।

**सम्यक् आजीव**– स्वयं की आजीविका चलाने के लिए शुद्ध कमाई पर ही निर्भर रहना सम्यक् आजीव कहलाता है।

**सम्यक् व्यायाम**– स्वयं को संयमित रखना, पाप की ओर प्रवृत्त कराने वाली स्थितियों का दमन करना, गलत आदतों का त्याग करना, उच्चस्थिति का निर्माण करना व उन्हें स्थित व बलशाली बनाना सम्यक् व्यायाम है।

**सम्यक् स्मृति**– शरीर, वेदना, चित्त और धर्म की मलिनता व क्षणिकता का सम्यक् स्मरण ही सम्यक् स्मृति है। स्मृतियाँ चार मानी गई है– 1. कायानुपश्यना 2. वेदनानुपश्यना 3. चित्तानुपश्यना 4. धर्मानुपश्यना। इन चारों को 'स्मृतिप्रस्थान' भी कहा जाता है।

**सम्यक् समाधि**– चित्त की एकाग्रता सम्यक् समाधि है (पाण्डेय, 2003, पृ.92)। समाधि को लौकिक एवं लोकोत्तर दो भागों में विभक्त किया गया है। विसुद्धिमग्गो में दोनों समाधियों को प्राप्त करने के उपाय बतलाए गए हैं। शमथयान की प्राप्ति लौकिक समाधि से होती है एवं विपश्यनायान की प्राप्ति लोकोत्तर समाधि से होती है (पाण्डेय, 2003, पृ.108)। साधक को समाधि द्वारा 'सम्यक् ज्ञान' प्राप्त होता है। 'सम्यक् ज्ञान' से 'सम्यक् विमुक्ति' की प्राप्ति होती है। सम्यक् विमुक्ति प्राप्त करने वाला 'अर्हत्' कहलाता है। हीनयान में 'अर्हत्' को आदर्श मानव कहा गया है।

बौद्ध साधना में 'अष्टांगिक मार्ग' को 'शमथयान' और 'सम्यक् ज्ञान एवं सम्यक् विमुक्ति' को 'विपश्यनायान' कहा जाता है। अष्टांगिक मार्ग में बौद्ध दर्शन का सम्पूर्ण नीतिशास्त्र समाहित है। इसे 'ध्यानयोग' भी कहा जाता है। बौद्ध दर्शन अष्टांग मार्ग को त्रिविध साधना मार्ग के रूप में भी स्वीकार करता है। बौद्ध साधनाएँ 'शील, प्रज्ञा और समाधि' के रूप में 'त्रिरत्न' के नाम से भी जानी जाती हैं।

अष्टांग मार्ग के प्रारम्भिक दोनों अंग 'सम्यक् दृष्टि व सम्यक् संकल्प' को 'प्रज्ञा', मध्य तीन अंग 'सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्म और सम्यक् आजीव' को 'शील' एवं अन्तिम तीनों अंग 'सम्यक् प्रयत्न, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि' को 'समाधि' में अन्तर्निहित किया गया है। इसप्रकार सम्पूर्ण बौद्ध साधना मार्ग शील, प्रज्ञा और समाधि में ही सन्निहित है।

बौद्ध साधनाभ्यास का आधार 'शील' है। संसार में शील एवं प्रज्ञा को श्रेष्ठ और उत्तम माना गया है। इन्हीं के माध्यम से 'समाधि' की प्राप्ति होती है, कहा गया है –

*सव्वदा सील संपन्नो पञ्ञवो सुसमाहिता।*
*आरद्धविरियो पहितत्तो ओघं तरति दुत्तरन्ति।। (संयुत्तनिकाय 1.53)*

अर्थात्– जो सदा शील सम्पन्न व प्रज्ञावान् है, जो सुष्ठु प्रकार से समाहित है, समाधिस्थ है, जो अशुभ का नाश व शुभ की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील और दृढ़ संकल्प वाला है वही संसार रूपी दुस्तर ओघ को पार करता है।

शील को कुशलधर्मों का आधार माना गया है। इसे 'शिरार्थ' भी कहा जाता है। जैसे सिर कट जाने से व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है वैसे ही शील भंग होने से शरीर नष्ट हो जाता है। शील के महत्व को स्वीकारते हुए बौद्ध धर्म में उपासकों व गृहस्थों दोनों के लिए पंचशील को आवश्यक माना गया है। बौद्ध साधना में शील सम्पन्न साधक ही समाधि का अधिकारी होता है। बौद्ध योग में आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान व समाधि सभी को 'समाधि' के अन्तर्गत समाहित माना गया है। विमुक्ति, शमन, भावना, विशुद्धि, विपश्यना, अधिचित्त, योग, प्रधान, निमित्त जैसे शब्द बौद्ध परम्परा में 'ध्यान' के लिए प्रयुक्त होते हैं (सोवटी, 1992, पृ.1)। ध्यान व समाधि को घनिष्ठता व सूक्ष्म भेद के रूप में बौद्ध साधना के अन्तर्गत स्वीकारा गया है। माना जाता है कि समाधि जहाँ केवल कुशल कर्मों से संबद्ध है वहीं ध्यान का क्षेत्र विस्तृत रूप में कुशल व अकुशल कर्मों के स्वरूप को समझने व इनसे मुक्त होने के लिए ध्यान व समाधि दोनों ही का अभ्यास परम आवश्यक माना जाता है। बौद्ध आध्यात्मिक मार्ग में ध्यान के मुख्यतः दो भेद माने गए हैं (कोसम्बी, 1940, पृ.104)। प्रथम 'आरम्भ उपनिज्झाण' और द्वितीय 'लक्खण उपनिज्झाण'। आरम्भ उपनिज्झाण में ध्यान का विषय 'आलम्बन पर चिन्तन' माना गया है और 'लक्खण उपनिज्झाण' में ध्यान का विषय 'लक्षणों का चिन्तन' है। आरम्भ उपनिज्झाण के अर्न्तगत आठ प्रकार के ध्यान समाविष्ठ है– 1. चार रूपावचर ध्यान 2. चार अरूपावचर ध्यान। यह सभी ध्यान लौकिक माने जाते हैं और इनके मार्ग को 'शमथयान' कहा जाता है। रूपावचर ध्यान से अरूपावचर ध्यान को अधिक श्रेष्ठ माना गया है। लक्खन उपनिज्झाण को लोकोत्तर ध्यान माना जाता है, इसका मार्ग 'विपश्यनायान' कहलाता है।

आरम्भ उपनिज्झाण के अन्तर्गत आठों प्रकार के ध्यानों के अभ्यास द्वारा साधक कर्म–संस्कारों को निर्जरित करता है। इसके पश्चात् राग–द्वेष क्षीण होते हैं। परन्तु इन ध्यान साधनाओं के माध्यम से अति गहरे कर्म–संस्कारों के बीच समूलरूप से नष्ट नहीं होते। उचित व अनुकुल अवसरों पर उनका उदय हो सकता है जिससे साधक का पतन भी सम्भव है। कर्म–संस्कारों के समूल नाश हेतु लोकोत्तर ध्यान साधना आवश्यक मानी जाती है। इसके माध्यम से सम्पूर्ण कर्म–संस्कारों के साथ–साथ राग–द्वेष की वृत्ति का भी नाश हो जाता है एवं साधक 'निर्वाण' को प्राप्त कर लेता है।

बौद्ध साधना का क्रम व्यवस्थित व सुनियोजित रूप में स्थूल से सूक्ष्म की ओर गतिशील होता है। बुद्ध के उपदेशों को उनके अनुयायियों ने काल व परिस्थितिनुसार परिवर्तित किया, जिस वजह से उनके मन्तव्यों में भेद प्रकट हो गए। मुख्यतः बौद्ध साधना 'हीनयान' व 'महायान' के रूप में भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों को प्रदर्शित करती है। जो निम्न प्रकार से स्पष्ट हैं –

### हीनयान बौद्ध साधना

बुद्ध की मौलिक शिक्षाओं को हीनयान मानता है। हीनयान को 'थेरवाद' अर्थात् पूर्वजों का मत एवं 'स्थिविरवाद' भी कहा जाता है। हीनयान के मतावलम्बी मानते हैं कि निर्वाण मात्र गिने–चुने मनुष्यों को ही प्राप्त होता है। उनकी साधना का लक्ष्य स्वयं का निर्वाण है। हीनयान बौद्ध साधनानुसार निर्वाण मात्र लोकोत्तर प्रज्ञा के माध्यम से समाधि द्वारा प्राप्त किया जाता है। जिसमें निर्वाण की अभिलाषा रखने वाला साधक सर्वप्रथम एक आलम्बन में 'एकाग्रता' या 'शमथ' को सिद्ध करता है। इसके पश्चात् वस्तुगत तत्त्व को जानने के लिए 'शमथ' का विपश्यना से संयोग करता है। 'शमथविपश्यना' युगल समाधि की भावना से अंततः समस्त दुःखों का पूर्णक्षय करने वाली 'लोकात्तर प्रज्ञा' का उदय होता है। फलस्वरूप निर्वाण की प्राप्ति होती है। हीनयान ज्ञान को प्रधानता देता है, जो निरीश्वरवादी व निवृत्तिप्रधान साधना पद्धति है। इनकी सारी शिक्षा, समग्र साधना केवल एक आत्मा के निर्वाण को ही लक्ष्य बनाती है (देवराज, 1983, पृ.189)।

### महायान बौद्ध साधना

महायान प्रवृत्तिमार्ग धर्म माना जाता है। महायान का मत है कि सभी मनुष्यों को उन्नति के योग्य बनाया जा सकता है, जिससे उनके दुःखों का अंत व निर्वाण प्राप्त हो सकता है।

महायान साधनात्मक दृष्टिकोण से बोधिचित्त के द्वारा चार पारमिताओं की साधना, दशभूमियाँ, त्रिकायवाद को महत्वपूर्ण मानता है। महायान साधना बोधिसत्त्व की साधना कही जाती है जो बोधिचित्त के द्वारा होती है। सभी सम्प्रदायों में साधना का आधार चित्त माना गया है। सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य में चित्तवृत्तियों के संयमन की कठिनाईयों का वर्णन प्राप्त होता है। चित्तवृत्तियों के सम्यक् नियंत्रणों के अभाव में 'अमृतपद निर्वाण' को प्राप्त करना असम्भव है। बौद्ध आष्टांगिक मार्ग के अभ्यास द्वारा चित्तवृत्तियों के ऊपर नियंत्रण प्राप्त हो सकता है। महायान बोधिचित्त की साधना का आधार 'अचित्तता' है। इस अचित्तता पर 'परार्थचित्तता' आधारित है। महायान की मान्यता है कि बुद्धत्व मनुष्यमात्र में है। इसी कारण सभी में बुद्ध होने की क्षमता है। व्यष्टि को नकार कर समष्टि को स्वीकारना ही 'अचित्तता' है, यह करुणा व प्रज्ञा दोनों का स्रोत है। बोधिसत्त्व साधना में साधक दो प्रकार के सम्भार को जुटाता है– (1). पुण्यसम्भार (2). ज्ञानसम्भार। पुण्यसम्भार अकुशल कर्मों के नाश व कुशल कर्मों को सम्पन्न करने से प्राप्त होता है तथा ज्ञानसम्भार यथार्थता–अयथार्थता, कुशल–अकुशल का भेद ज्ञान है। कहा जा सकता है कि ज्ञानसम्भार प्रज्ञा की असंगता एवं निःस्वभावता है। दान, शील, शान्ति, वीर्य, ध्यान यह पांच परमिताएँ पुण्यसंभार हैं तथा प्रज्ञापारमिता ज्ञानसंभार है। इस प्रकार इन छः पारमिताओं के साथ ही बोधिचित्त साधना हेतु उपाय, प्रणिधान, बल और ज्ञान के रूप में अन्य चार परमिताओं की साधना भी आवश्यक है।

महायान साधना की दसभूमियों में प्रमुदिता, विमला, प्रभाकरी, अर्चिष्मती, सुदुर्गमा, अभिमुखी, दूरंगमा, अचला, साधुमती व धर्ममेधा का समावेश होता है। ये सभी बोधिसत्व के आध्यात्मिक विकास हेतु आवश्यक है। महायान, बुद्ध के त्रिकाय अर्थात् तीन काय मानता है। प्रथम 'धर्मकाय' अर्थात् उन कर्मों का समूह जिनके लाभ से कोई भी व्यक्ति सभी धर्मों का ज्ञान प्राप्त करके 'बुद्ध' हो सकता है। इसे 'सर्वश्रेष्ठ काय' माना जाता है। बुद्ध को जन्म के समय मिली 'काया' 'रूपकाय' है, इससे वह अनेकों बुद्धों की सृष्टि कर लेते हैं। तृतीय 'संभोग काय' को बुद्ध की 'विभूति' माना जाता है। इसके माध्यम से वह देवमण्डलों में धर्मसम्भोग करते हैं। महायान 'भक्ति' की विशेषताओं को स्वीकार करते हुए बुद्ध की मूर्ति–पूजा व अर्चना को स्थान देता है। महायान भक्ति–भावना से ओत–प्रोत मानवों के कल्याण हेतु सुगम मार्ग के रूप में साधना पद्धति को स्वीकार करता है। महायान बौद्ध साधना मार्ग में 'शास्ता' का ईश्वरीकरण कर दिया गया है।

बौद्ध दर्शन 'त्रिविधयान' मानता है। इसके अनुसार प्रत्येक 'यान' में 'जीवन्मुक्ति' या बोधि की कल्पना एक–दूसरे से नितान्त भिन्न व विलक्षण है। त्रिविधयान में श्रावकबोधि, प्रत्येक बुद्धबोधि एवं सम्यक् संबोधि का समावेश है। बुद्ध के पास ज्ञान अर्जित करने वाला व्यक्ति 'श्रावक' कहलाता है। श्रावक के लिए चार अवस्थाओं का नियम है– 1. सोतापन्न 2. सकदागामी 3. अनागामी एवं 4. अर्हत्। श्रावक बोधि का आदर्श हीनयान को मान्य है एवं महायान का आदर्श 'बोधिसत्त्व' है। 'बोधिसत्त्व' की कल्पना ही महायान की सबसे बड़ी विशेषता है (उपाध्याय, 1954, पृ.604)। 'बोधिसत्त्व' का शाब्दिक अर्थ है– बोधि प्राप्त करने की ईच्छा रखने वाला साधक। बोधिसत्त्व के प्रधान् गुण 'महामैत्री' और 'महाकरुणा' है (उपाध्याय, 1984, पृ.130)। बोधिसत्त्व की ईच्छा रखने वाला साधक का स्वार्थ इतना विस्तृत होता है कि उसमें समस्त विश्व के प्राणी समा जाते हैं। वह अपनी मुक्ति तब तक नहीं चाहता जब तक एक भी प्राणी दुःख का अनुभव करता है।

## निष्कर्ष

शोधपत्र के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि बौद्ध साधना एक मध्यम मार्गी साधना पद्धति है, जिसमें संसार को दुःखमय मानते हुए समस्त दुःखों के शमन के लिए अष्टांग मार्ग के रूप में व्यवस्थित साधना क्रम दृष्टिगोचर होता है। बौद्ध त्रिरत्न प्रज्ञा, शील, समाधि के रूप में निर्वाण प्राप्ति के ईच्छुक साधकों के लिए उच्चतम् लक्ष्य प्राप्ति का साधन हैं। बौद्ध दर्शन में वर्णित साधना पद्धति हीनयान व महायान के रूप में विकसित होती है, जिसमें हीनयान साधना में साधक ज्ञान के माध्यम से स्वयं के निर्वाण को लक्ष्य बनाता है एवं महायान में साधक महामैत्री व महाकरूणा को आधार बना कर संसार के समस्त प्राणियों के शाश्वत सुख की अभिलाषा रखता है।

बौद्ध साधना वर्तमान समय में भी प्रासंगिक है; क्योंकि आदिकाल से ही सुख प्राप्त करने का ईच्छुक मनुष्य आधुनिक काल में भी इसे प्राप्त करने के लिए ही प्रयत्नशील है। जीवन को बुद्ध ने दुःखमय माना है, परन्तु शील के आचरण द्वारा नैतिक जीवन अपनाते हुए अवांछित दुःखों को उत्पन्न होने से रोका जा सकता है। बौद्ध साधना द्वादशनिदान के माध्यम से कर्मफल के प्रति सचेत करती है कि जैसा कर्म करोगे वैसा फल प्राप्त होगा। प्रत्येक व्यक्ति सामान्य नैतिक नियमों का पालन करने लगे तो वह स्वयं के जीवन को तो सुखमय बनाएगा, साथ ही साथ समस्त विश्व सुखमय हो जाएगा क्योंकि मनुष्यमात्र में देवत्व विद्यमान है जिसे साधना द्वारा परिष्कृत किया जा सकता है।

**निवेदिता,** पी–एच0डी0, प्रवक्ता, दर्शनशास्त्र विभाग, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

## संदर्भ सूची

**गीता प्रेस** (1940). *कल्याण साधना अंक (पन्द्रहवें वर्ष का विशेषांक)।* गोरखपुर– गीता प्रेस।

**आचार्य, श्रीराम शर्मा** (1998). *साधना से सिद्धि (वाङमय, भाग–1)।* मथुरा– अखण्डज्योति संस्थान।

**पाण्डेय, रेवतीरमण** (2003). *समग्रयोग।* वाराणसी– कला प्रकाशन।

**शास्त्री, स्वामी द्वारिकादास** (1992). *संयुक्त निकायः (भाग–3)।* वाराणसी– बुद्ध भारती ग्रन्थमाला।

**आम्बेडकर, बी. आर.** (2000). *बुद्ध आणि त्यांचा धम्म।* नागपूर– सोसायटी ऑफ इंडिया।

**सोवटी, हरचरणसिंह** (1992). *विपश्यना द बुद्धिस्ट वे।* दिल्ली– ईस्टर्न बुक लिंकर्स।

**कोसम्बी, धर्मानन्द** (1940). *विसुद्धिमग्ग (भाग–2)।* बाम्बे– भारतीय विद्याभवन।

**देवराज, नन्द किशोर** (1983). *भारतीय दर्शन।* लखनऊ– उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।

**उपाध्याय, भरत सिंह** (1954). *बौद्ध धर्म और अन्य भारतीय दर्शन।* दिल्ली– मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स।

**उपाध्याय, आचार्य बलदेव** (1984). *भारतीय दर्शन।* वाराणसी– चौखम्भा ओरियन्टालिया।